कौशाम्बक-स्कंधक

(कौशाम्बी के संघभेद के विषय में)
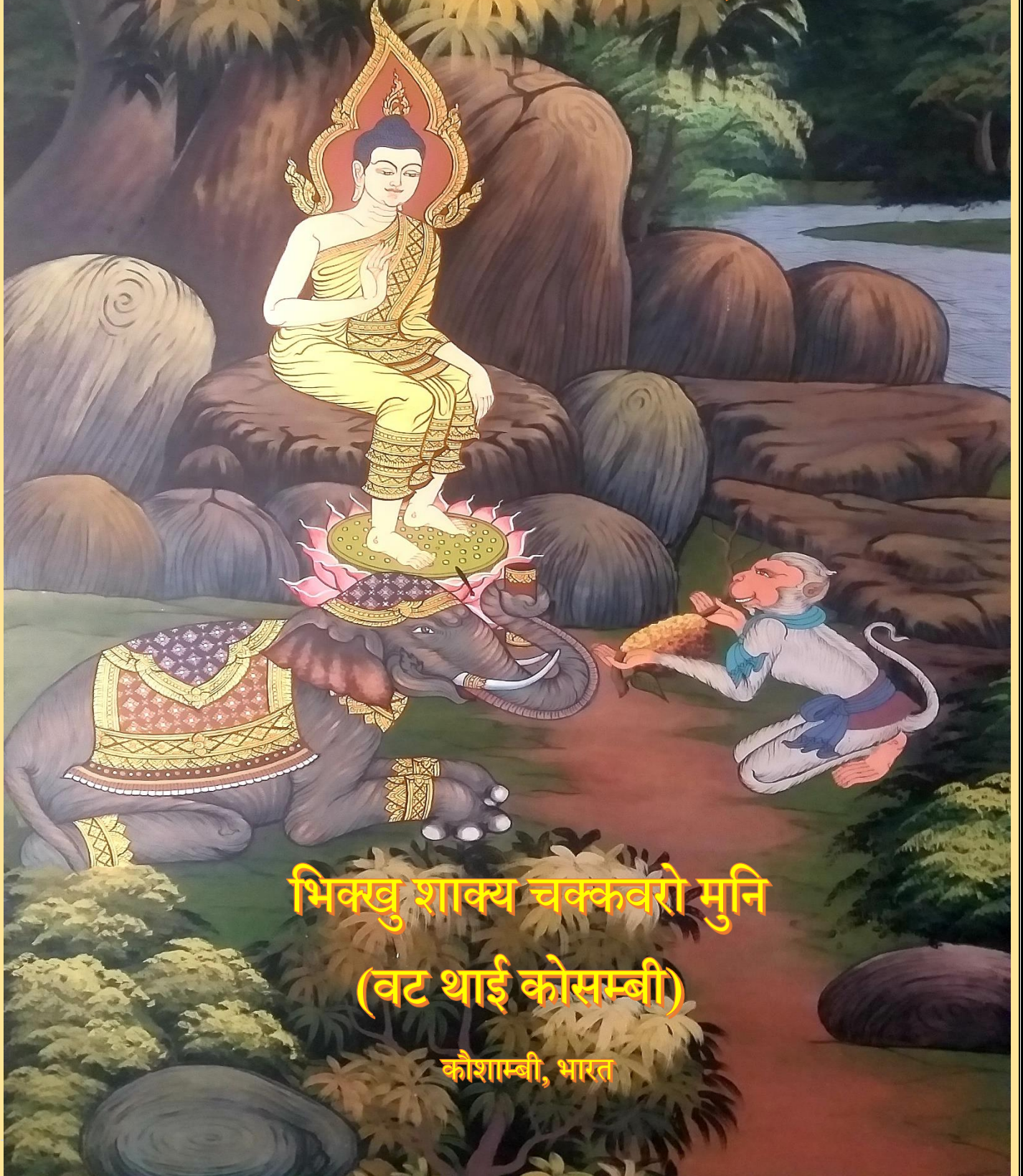
भिक्खु शाक्य चक्कवरो मुनि

(वट थाई कोसम्बी)

कौशाम्बी, भारत
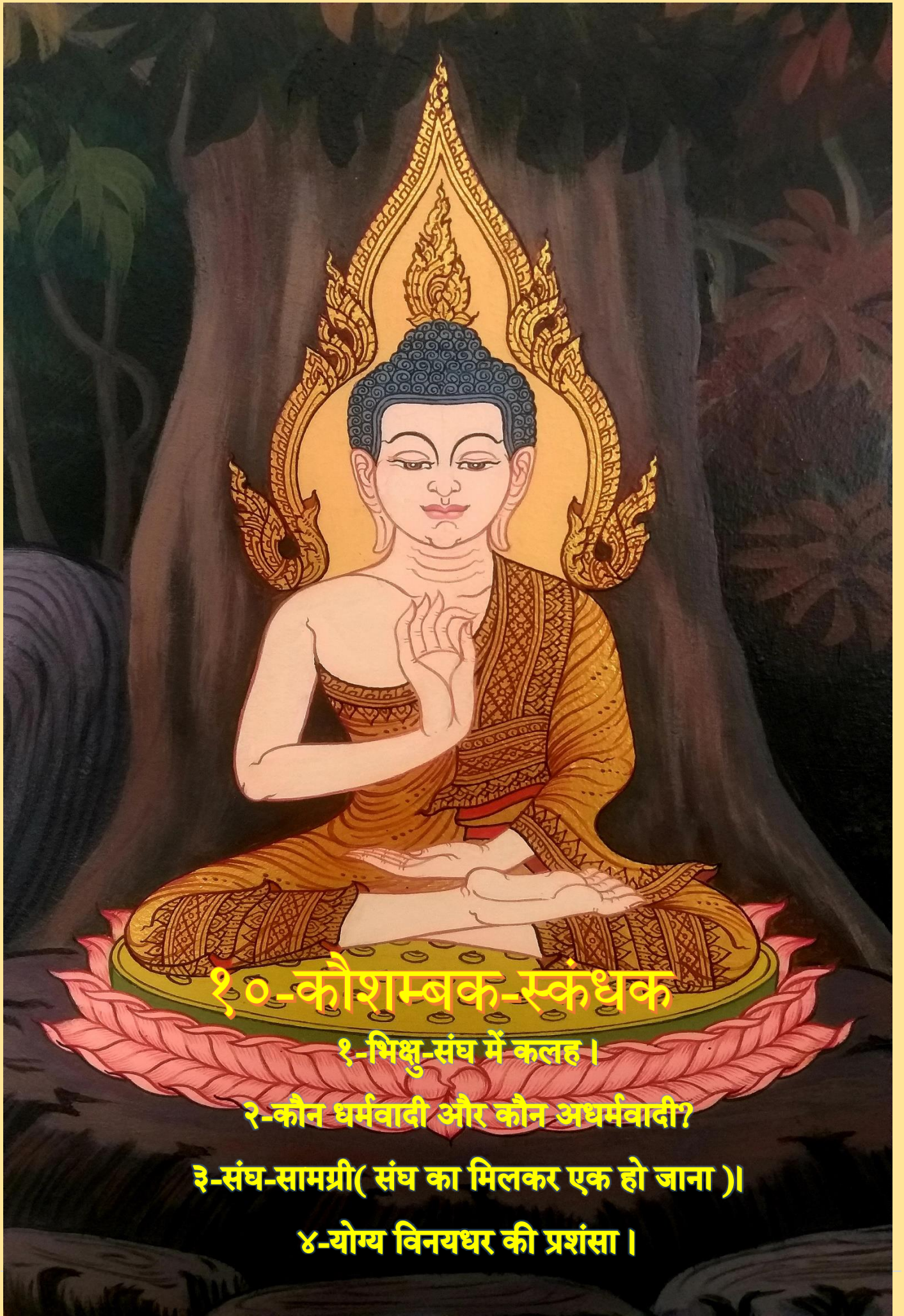
१०-कौशम्बक-स्कंधक
१-भिक्षु-संघ में कलह।
२-कौन धर्मवादी और कौन अधर्मवादी?
३-संघ-सामग्री(संघ का मिलकर एक हो जाना)।
४-योग्य विनयधर की प्रशंसा।

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

कौशम्बक-स्कन्धक

विनयपिटक

महावग्ग

भिक्खु शाक्य चक्कवरो मुनि

वट थाई कोसम्बी

(थाई बुद्ध विहार)

कौशाम्बी, भारत

धम्म लाभ हेतु
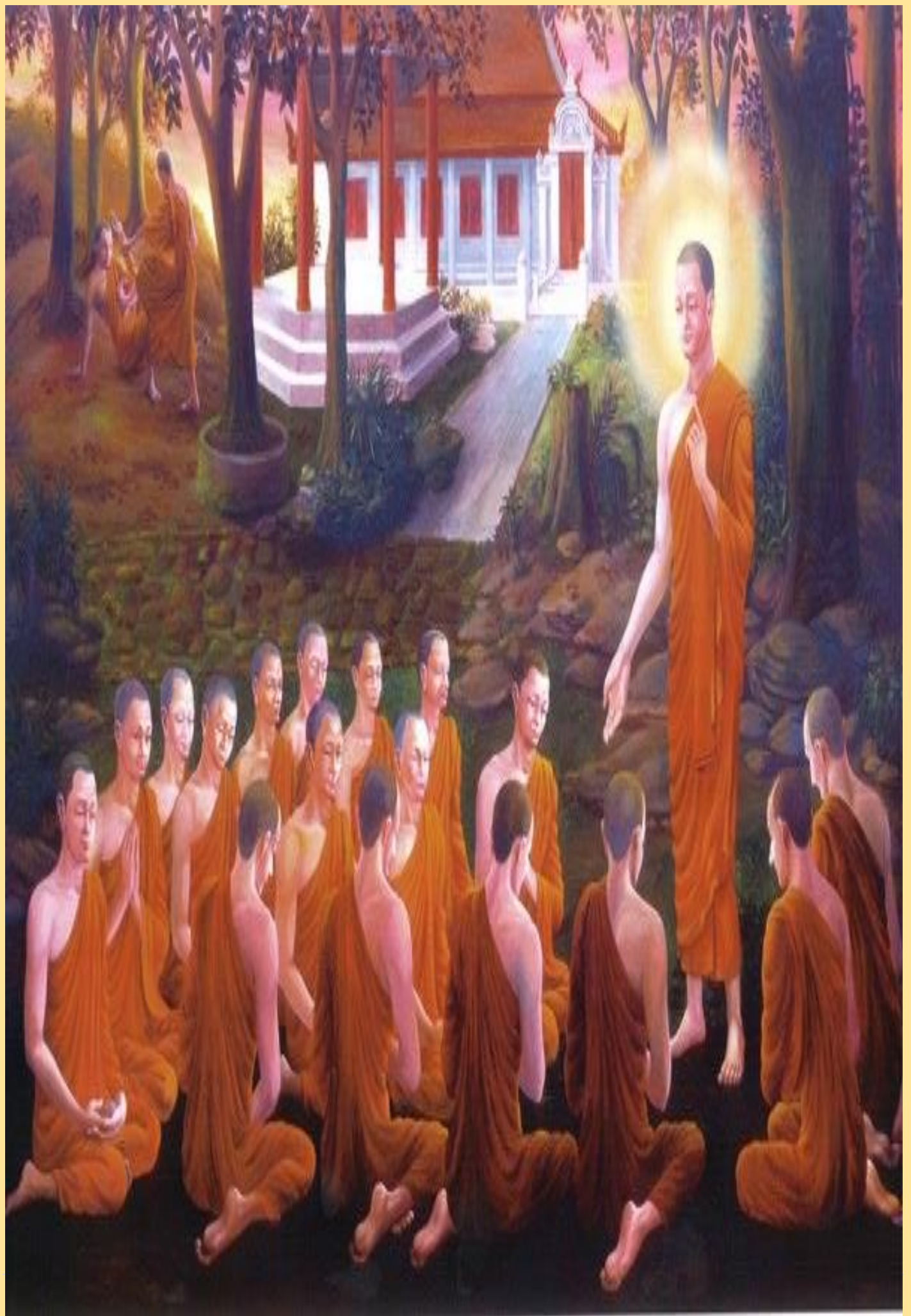
|||नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स|||

भिक्षु-संघ में कलह

कौशाम्बी

(१) कौशाम्बी में भिक्षुओं में झगडा

उस समय भगवान कौशाम्बी के घोषिता राम में विहार करते थे, (तब) किसी भिक्षु को 'आपत्ति' (दोष) हुआ थी। वह उस आपत्ति को आपत्ति समझता था; दूसरे भिक्षु उस आपत्ति को अनापत्ति समझते थे। (फिर) दूसरे समय वह (भी) उस आपत्ति को अनापत्ति समझने लगा; और दूसरे भिक्षु उस आपत्ति को आपत्ति समझने लगे। तब उन भिक्षुओं ने उस भिक्षुसे कहा-"आवुस ! तुम जो आपत्ति किये हो, उस आपत्ति को देख रहे हो?" "आवुसो! मुझे 'आपत्ति' ही नहीं ! किसको मैं देखू ?" तब उन भिक्षुओंने जमा हो, ... आपत्ति न देखने के लिये, उस भिक्षुका 'उत्क्षेपण" किया । वह भिक्षु, बहु-श्रुत, आगमज्ञ, धर्म-धर, वि य-धर; मात्रिका-धर,'डित व्यक्त, मेधावी, ल ज्जी, आस्थावान सीखने वाला था। उस भिक्षु ने जानकर, संभ्रान्त भिक्षुओंके पास जाकर कहा-'"हे आवुसो ! यह अनापत्ति आपत्ति नहीं। मैं आपत्ति-रहित है, इसे मुझे (वह लोग)

'अट्ठकथामें है-"एक संघाराममें दो भिक्षु--एक वि न ब-धर(विनयपिटक-पाठी), दूसरा सौ त्रान्तिक (-सूत्रपिटक-पाठी,) वास करते थे। उनमें सौत्रान्तिक एक बिन पालाने में जा, शौचके बचे जलको वर्तनमें ही छोड , चला आया। विनयधर पीछे पालाने गया। वर्तन में पानी देखकर, उस भिक्षुसे पूछा--'आयुस ! तुमने इस जलको छोळा है?' हाँ, आवस !' 'तुम इसमें आपत्ति (बोष) नहीं समझते ?' । हाँ, नहीं समझता' । 'आवुस ! यहाँ आपत्ति होती है ।' 'पवि होती है, तो(प्रति-) देशना (क्षमापन) करूंगा । यदि तुमने बिना जाने, भूलसे, किया, तो आपत्ति नहीं है' वह उस आपत्ति को अनापत्ति समझता था। बिनयबरने भी अपने अनुयायियोंसे कहा-'यह सौत्रान्तिक 'भापत्ति' करके भी नहीं समझता" । वह उस (सौत्रान्तिक) के अनुयायियों को देखकर कहते-"तुम्हारा उपाध्याय आपत्ति करके भी 'आपत्ति' हुई नहीं जानता।" वह कहते-"पर विनयधर पहिले अनापत्तिकर, अब आपत्ति करता है, यह मिथ्या-वानी है।" उन्होंने कहा-'तुम्हारा उपाध्याय मिथ्या-वादी है" । इस प्रकार कलह बड़ी ।" ।

सूत्र-पिटकके दीर्घ-निकाय आदि पाँच निकाय आ ग म कहे जाते है।

"अति-संक्षिप्त अभिधर्म मात्रिका है।

आपत्ति सहित (कहते है)। 'उत्क्षेपण'-रहित (अनुत्क्षिप्त) हैं, मुझ (उन्होंने) उत्क्षिप्त किया। अधार्मिक-कोप्य, स्थान में अनुचित निर्णय (=कर्म) द्वारा उत्क्षिप्त किया गया है। आयुष्मान (लोग) धर्म के साथ विनय के साथ मेरा पक्ष ग्रहण करें।" (तब) सभी जानकार संभ्रान्त भिक्षुओं को पक्षमें उसने पाया। जानपद (-दीहाती) जानकार और संभ्रान्त भिक्षुओ के पास भी दूत भेजा। जनपद जानकार और संभ्रान्त भिक्षुओं को भी पक्ष में पाया। तब वह उत्क्षिप्त भिक्षुके पक्ष वाले भिक्षु, जहाँ उत्क्षेपक थे, वहाँ गये। जाकर उत्क्षेपक भिक्षुओं से बोले

"यह अनापत्ति है आवुसो! आपत्ति नहीं। यह भिक्षु आपत्ति-रहित है, आपत्ति-सहित (-आपन्न) नहीं। अनुत्क्षिप्त है . . . . उरिक्षप्त नहीं। यह अ-धार्मिकः कर्म (: न्याय) से उत्क्षिप्त किया गया है।" ऐसा कहने पर उत्क्षेपक भिक्षुओं ने उरिक्षप्त भिक्षु के पक्षवालों से कहा-"आवुसो ! यह आपत्ति है, अनापत्ति नहीं। यह भिक्षु आपन्न है, अनापन्न नहीं। यह भिक्षु उत्क्षिप्त है, अनुत्क्षिप्त नहीं। यह धार्मिक-अकोप्य=स्थानीय, कर्म (-न्याय) द्वारा उत्क्षिप्त हुआ है। आयुष्मानो! आप लोग इस उरिक्षप्त भिक्षुका अनुवतं नः अनुगमन न करें।" उत्क्षिप्तके पक्षवाले भिक्षु, उत्क्षेपक भिक्षुओं द्वारा ऐसा कहे जाने पर भी; उत्क्षिप्त भिक्षुका वैसे ही अनुवर्तन= अनुगमन करते रहे।

(२) उत्क्षिप्तकों को उपदेश

तब भगवान-'भिक्षु-संघ में फूट हो गई, भिक्षु-संघ में फूट हो गई'-(सोच) आसन से उठ, जहाँ वह उत्क्षेपण करने वाले भिक्षु थे, वहाँ गये। जाकर बिछे आसन पर बैठे। बैठकर भगवान ने उत्क्षेपण करने वाले भिक्षुओं से कहा "मत तुम भिक्षुभो!-'हम जानते हैं, हम जानते हैं-(सोच) जैसा-तैसा होने पर भी (किसी) भिक्षुका उत्क्षेपण करना चाहो। यदि भिक्षुओ! (किसी) भिक्षुने आपत्ति (अपराध) किया हो, और वह उस आपत्तिको अन्-आपत्ति (के तौरपर) देखता हो और दूसरे भिक्षु उस आपत्तिको आपत्ति (के तौरपर) देखते हों। यदि भिक्षुओ ! वे भिक्षु उस भिक्षु के बारेमें ऐसा जानते हों-'यह आयुष्मान बहु-श्रुत, आगमश, धर्म-धर, विनय-धर, मातृका-धर, पंडित (-व्यक्त), मेधावी, लज्जाशील, आस्थावान्, सीख (चाहने वाले हैं। यदि हम इन भिक्षु का आपत्ति न देखने के लिये उत्क्षेपण करेंगे = 'इन भिक्षु के साथ हम उपोसथ न करेंगे, इन भिक्षु के बिना उपोसथ करेंगे; तो इसके कारण संघ में झगळा, कलह, विग्रह, विवाद, संघ में फूट - संघराजी - संघ-व्यवस्थान – संघ का बिलगाव होगा।' तो भिक्षुओ! फुट को वडा समझकर, भिक्षुओंको आपत्ति न देखनेके लिये उस भिक्षुका उत्क्षेपण नहीं करना चाहिये। यदि भिक्षुओ! भिक्षुने आपत्ति की हो और वह उस आपत्तिको अन-आपत्ति के तौर पर देखता हो। यदि हम इन भिक्षु का आपत्ति के न बेखनेके लिये उत्क्षेपण करेंगे = इन भिक्षुके साथ अवारणा न करेंगे, इन भिक्षु के बिना प्रवारणा करेंगे (०) इन भिक्षुओंके साथ संघ कर्म न करेंगे। इन भिक्षुके साथ आसन पर नहीं बैठेंगे। इन भिक्षुषों के साथ यवागू पीने नहीं बैठेंगे। इन भिक्षुओं के साथ भोजन करने नहीं बैठेंगे। इन भिक्षुओं के साथ एक छत के नीचे वास नहीं करेंगे। इन भिक्षुओं के साथ वृद्धत्व के अनुसार अभिवादन, प्रत्युत्थान, हाथ जोडना, सामीचिकर्म (=कुशल

समाचार पूछना) नहीं करेंगे। तो इसके कारण झगडा • होगा; तो भिक्षुओ! फूट को बडा समझकर भिक्षुओं को, आपत्ति न देखने के लिये उस भिक्षुका उत्क्षेपण नहीं करना चाहिये।"

(३) उत्क्षेपकोंको उपदेश

तब भगवान उत्क्षेपण करने वाले भिक्षुओं को यह बात कह आसान से उठ, जहाँ उत्क्षिप्त (-उत्योपण किये गये भिक्षु के पक्ष वाले भिक्षु ये वहाँ गये। जाकर बिछे आसन पर बैठे। बैठकर भगवान ने उत्क्षिप्त (भिक्षु)के पक्षवाले भिक्षुओंसे यह कहा-

"भिक्षुओं! आपत्ति करके–'हमने आपत्ति नहीं की, हम अन्-आपत्ति युक्त है' (सोच) आपत्तिका प्रतिकार न करना, मत चाहो। यदि भिक्षुओ! (किसी) भिक्षुने आपत्ति की हो और वह उस आपत्ति को अन-आपत्ति (के तौर पर) देखता हो, और दूसरे भिक्षु उस आपत्ति को आपत्ति (के तौर पर) देखते हों। यदि वह भिक्षु उन भिक्षुओं के बारेमें ऐसा जानता है-'यह आयुष्मान बहुश्रुत ० सीख (चाहने) वाले है, यह मेरे कारण, यह दूसरो के कारण, छंद (-स्वच्छाचार), द्वेष मोह, भय (के रास्ते, या) अगति (-बुरे रास्ते)में नहीं जा सकते। यदि ये भिक्षु आपत्ति न देखने के लिये मेरा उत्क्षेपण करेंगे, मेरे साथ उपोसथ न करेंगे, मेरे बिना उपोसथ करेंगे तो इसके कारण संघ में झगडा • होगा।' 'भिक्षुओ ! फूट को बडा समझकर दूसरों के ऊपर विश्वासकर उस आपत्ति की प्रतिदेशना (-क्षमापन) करनी चाहिये। यदि भिक्षुओ! (किसी) भिक्षु ने आपत्ति की हो और वह उस आपत्ति को अन-आपत्ति (के तौरपर) देखता हो • भय (के रास्ते या) अगति (बुरे रास्ते) में नहीं जा सकते। यदि ये भिक्षु आपत्ति के न देखने के लिये मेरा उत्क्षेपण करेंगे, मेरे साथ प्रवारण न करेंगे। सामीचि कर्म न करेंगे; तो इसके कारण झगडा होगा।' तो भिक्षुओ! फूटको वळा समझकर, दूसरोंके ऊपर विश्वास कर उस आपत्ति की प्रतिदेवाना (=क्षमापन) करना चाहिये।" तब भगवान उत्क्षिप्त (भिक्षु) के पक्ष वाले भिक्षुओं से यह बात कह आसन से उठकर चले गये।

(४) आवासके भीतर और बाहर उपोसथ करना

उस समय उत्क्षिप्तानुगामी (=उत्क्षिप्त भिक्षुका अनुगमन करनेवाले) भिक्षु वहीं सीमा के भीतर उपोसथ करते थे, संघ कर्म करते थे; किंतु उत्क्षेपक (उत्क्षेपण करने वाले) भिक्षु सीमा से बाहर जा उपोसथ करते थे संघ-कर्म करते थे। तब एक उत्क्षेपक भिक्षु, जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। जाकर भगवान को अभिवादन कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे उस भिक्षु ने भगवान से यह कहा

भन्ते ! यह उत्क्षिप्तानुगामी भिक्षु वहीं सीमा के भीतर उपोसथ करते हैं, संघ-कर्म करते है। किंतु भन्ते। हम उत्क्षेपक भिक्षु सीमा से बाहर जाकर उपोसथ करते हैं, संघ-कर्म करते हैं।"

"भिक्षु ! यदि उत्क्षिप्तानुगामी भिक्षु वहीं सीमा के भीतर उपोसथ करेंगे, संघ-कर्म करेंगे जैसा कि मैने ज्ञप्ति, और अनुश्रावण का विधान किया है, तो उनके वे कर्म धर्मानुसार-अकोप्य और मुक्त होंगे। भिक्षु ! यदि तुम

उत्क्षेपक भिक्षु वहीं सीमा के भीतर जैसाकि मैने ज्ञप्ति और अनुश्रावण का विधान किया है, उसके अनुसार उपोसथ करोगे, संघ-कर्म करोगे तो तुम्हारे भी वे कर्म धर्मानुसार, अकोप्य और मुक्त होंगे। सो किसलिये ?- भिक्षु तुम्हारे लिये वे दूसरे आवास के भिक्षु हैं और उनके लिये तुम दूसरे आवास के भिक्षु हो । भिक्षु ! भिन्न आवास होने के यह दो स्थान है(१) स्वयं ही अपनेको भिन्न आवास वाला बनाता है, या (२) समग्र हो संघ (आपत्ति के)न देखने या न प्रतिकार करने, अथवा (बुरी धारणा के) छोड ने के लिये उसका उत्क्षेपण करता है । "भिक्षु ! एक आवास होनेके यह दो स्थान हैं-(१) स्वयं ही अपनेको एक आवासवाला बनाता है। या (२) संघ-समग्र हो न देखने, या न प्रतिकार करने अथवा न छोड नेके लिये उत्क्षिप्त (किये गये व्यक्ति)को ओसारण करता है।"""

(५) कलह के कारण अनुचित काविक वाचिक कर्म नहीं करना चाहिये

उस समय भोजन करते वक्त (गृहस्थ के) घर में भिक्षुओं ने अगला, कलह, विवाद किया और अनुचित कायिक और वाचिक कर्म दिखलाया। हाथ से इशारा किया । लोग हैरान...होते थे

कैसे शाक्य पुत्रीय श्रमण भोजन करते वक्त (गृहस्थ के घर में) झगड़ा, कलह, विवाद करेंगे और अनुचित कायिक तथा वाचिक कम प्रदर्शित करेंग; हाथ का इशारा करेंगे !' भिक्षुओ ने उन मनुष्यों के हैरान होने ....को सुना और जो ये अल्पेच्छ o । भिक्षु थे वे हैरान...होते थे-'कैसे भिक्षु • हाथका इशारा करेंगे !' तब उन भिक्षुओं ने भगवान से यह बात कही

"सचमुच भिक्षुओ! उन भिक्षुओ ने हाथ का इशारा किया ?"

(हाँ) सचमुच भगवान।"

भगवान ने फटकारकर धार्मिक कथा कह भिक्षुओंको संबोधित किया

"भिक्षुओ ! संघ में फूट होने पर, अन्याय होने पर सम्मोदन न करने पर-'इतनेसे एक दूसरे को अनुचित कायिक कर्म, वाचिक कर्म न दिखलायेंगे, हाथका इशारा न करेंगे (सोच) आसन पर बैठे रहना चाहिये । भिक्षुओ। संघ में फूट हो जाने पर, न्याय होने पर, सम्मोदन के किये जाने पर, दूसरे आसन पर बैठना चाहिये ।"

(६) कलह करने वालों की जिद

उस समय भिक्षु संघ में झगळा करते, कलह करते, विवाद करते, एक दूसरे को मुख (रूपी) मक्ति (हथियार) से वैधते फिरते थे। वह झगडेको शान्त न कर सकते थे। तब एक भिक्षु जहाँ भगवान थे वहाँ गया। जाकर भगवान्को अभिवादनकर एक ओर खळा हो गया। एक ओर खळे उस भिक्षु ने भगवान से यह कहा

"भन्ते ! यहाँ संघ में भिक्षु झगळा करते झगडे को शान्त नहीं कर सकते। अच्छा हो भन्ते ! यदि भगवान जहाँ वह भिक्षु है वहाँ चलें।"

भगवान ने मौन से स्वीकार किया। तब भगवान जहाँ वे भिक्षु थे वहाँ गये। जाकर उन भिक्षुओं से बोले

"बस भिक्षुओ ! मत झगळा, कलह, विग्रह, विवाद करो।" ऐसा कहनेपर एक अधर्मवादी भिक्षु ने भगवान से यह कहा

"भन्ते ! भगवान ! धर्मस्वामी ! रहने दें। परवाह मत करें। भन्ते ! भगवान ! धर्मस्वामी ! दृष्ट-धर्म (-इसी जन्म) के सुख के साथ विहार करें। हम इस झगळे, कलह, विग्रह, विवाद को जान लेंगे।"

दूसरी बार भी भगवान ने उन भिक्षुओंसे यह कहा-"बस।" दूसरी बार भी उस अधर्नवादी भिक्षुने भगवान से यह कहा-"भन्ते !०।"

(७) दीर्घायु जातक

तब भगवान ने भिक्षुओंको संबोधित किया-"भिक्षुओ ! भूतकाल में वाराणसी में ब्रह्मदत्त नामक काशिराज था। (वह) आढय-महाधनी- महा भोगवानः महा सैन्य युक्त महावाहन युक्त महाराज्य युक्त, भरे कोष्ठागार वाला था। (उस समय) दीघित नामक कोसस राजा था; जोकि दरिद्र, अल्पचन, अल्पभोग अल्पसैन्य, अल्पवाहन, थोळे राज्यवाला, अपरिपूर्ण कोष, कोठागारवाला था। तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त ने चतुरंगिनी सेना तैयारकर कोसलराज दीघित पर चढ़ाई की। तब भिक्षुओ ! कोसलराज दीधिति को ऐसा हुआ—'काशिराज ब्रह्मदत्त आढय है और मैं दरिद्र मैं काशिराज ब्रह्मदत्त के साथ एक भिडन्त भी नहीं ले सकता। क्यों न में पहले ही नगर से चला जाऊँ।' तव भिक्षुओ ! कोसलराज दीधिति महिषी (-पटरानी) को लेकर पहिले ही नगर से भाग गया। तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त कोसलराज दीघित की सेना, वाहन, देश, कोष, और कोष्ठागार को जीतकर अधिकार में किया। तब भिक्षुओ ! कोसलराज दीघित अपनी स्त्री सहित जिधर वाराणसी थी उधर को चला। क्रमशः जहाँ वाराणसी है वहाँ पहुँचा। तब भिक्षुओ ! कोसल राज दीघित ने अपनी स्त्री सहित वाराणसी के एक कोने में कुम्हार के घर में अज्ञात वेष से परिव्राजक का रूप धारण कर वास किया। तब भिक्षुओ कोसलराज दीघित की महिषी अचिर में ही गर्भिणी हुई। उसको ऐसा दोहद (दोहड) हुआ—वह सूर्य के उदय के समय की डा क्षेत्र (सुभूमि) में सन्नाह और वर्म (• कवच)से युक्त चतुरंगिनी सेना को खळी देखना चाहती थी और खडग की घोवन को पीना चाहती थी। तब भिक्षुओ कोसलराज दीघित की महिषी ने कोसल राज दीघित से यह कहा

"देव ! मैं गर्भिणी हूँ। मुझे ऐसा दोहद उत्पन्न हुआ है—सूर्य के उदय के समय क्रीड़ा-क्षेत्र में सन्नाह और वर्म से युक्त चतुरंगिनी सेना को खळी देखना चाहती और खडग की धोवन को पीना चाहती हूँ।'

"देवि ! दुर्गति में पळे हम लोगों को कहाँ से हम लोगों के लिये क्रीडा क्षेत्र में सन्नाह और वर्म मे युक्त चतुरंगिनी सेना खळी (होगी), और कहाँ से खगकी धोवन (आयेगी)?'

"देव ! यदि में न पाऊँगी तो मर जाऊँगी।'

भिक्षुओ ! उस समय काशिराज ब्रह्मदत्त का ब्राह्मण पुरोहित कोसलराज दीधिति का मित्र था। तब भिक्षुओ। कोसलराज दीधित, जहाँ काशिराज ब्रह्मदत्त का पुरोहित था, वहाँ गया। जाकर... पुरोहित ब्राह्मण से यह बोला

"सौम्य' ! तेरी सखिनी गर्भिणी है। उसको इस प्रकार का दोहन उत्पन्न हुआ है-और खड्गकी धोवन को पीना चाहती है।'

"तो देव हम भी देवी को देखना चाहते हैं।'

"तब भिक्षुओ | कोसल राज दीघित की महिषी जहाँ काशिराज ब्रह्मदत्त का पुरोहित ब्राह्मण था वहाँ गई...पुरोहित ब्राह्मण ने दूर से ही कोसलराज दीघित की महिषी को आते देखा। देखकर आसन से उठ एक कंधे पर उत्तरासंघ कर जिधर कोसल राज दीधिति की महिषी थी उधर हाथ जोड तीन बार उदान (चित्तोल्लास से निकला शब्द) कहा-अहो ! कोसलराज कोख में हैं ! अहो। कोसलराज कोख में है। कोसलराज कोख में है (और रानी से कहा)-देवि प्रसन्न हो, तू सूर्यके उदय के समय क्रीडा क्षेत्र में सन्नाह और वर्म से युक्त चतुरंगिनी सेना को खड़ी देखेगी, और खड़ग की थोवनको पीयेगी।"

"तब भिक्षुओ | काशिराज ब्रह्मदत्त का पुरोहित ब्राह्मण जहाँ काशिराज ब्रह्मदत्त था वहाँ गया। जाकर यह बोला-'देव ! ऐसी साइत है इसलिये कल सूर्य के उदय के समय क्रीडास्थल में सन्नाह और वर्म से युक्त चतुरंगिनी सेना खळी हो और खड्ग धोये जायें।'।

"तब भिक्षुओ | काशिराज ब्रह्मदत्त ने आदमियों को आज्ञा दी-'भणे ! जैसा पुरोहित ब्राह्मण बहता है वैसा करो।"

"भिक्षुओ ! (इस प्रकार) कोसलराज दीधिति की महिषी ने सूर्य के उदय के समय कीड़ास्थल में

(सौम्य='मित्रके संबोधनमें इस शब्दका प्रयोग होता था।)

सन्नाह और वर्म से युक्त चतुरंगिनी सेना को बढी देख पाया तथा खडग की धोवन को पी पाया।

"तब भिक्षुओ ! कोसल राज दीघित की महिषी ने उस गर्भ के पूर्ण होने पर पुत्र प्रसव किया (माता-पिता ने) उसका दीर्घायु नाम रखा। तब भिक्षुओ ! बहुत काल न जाते जाते दीर्घायु कुमार विज्ञ हो गया। कोसलराज दीघित को वह हुआ---'यह काशिराज ब्रह्मदत्त हमारे अनर्थ का करने वाला है। इसने हमारी सेना, वाहन,

देश, कोष, और कोष्ठागारको छीन लिया है। यदि यह जान पायेगा तो हम तीनों को मरवा डालेगा। क्यों न मैं दीर्घाय कुमार को नगर से बाहर बसा दूं।'

"तब भिक्षुओ ! कोसलराज दीघिति ने दीर्घायू कुमार को नगर से बाहर बसा दिया।... दीर्घायु कुमार नगर से बाहर बसते थोड़े ही समय में सारे शिल्पों को सीख गया।...उस समय कोसल राज दीघिति का हजाम काशिराज ब्रह्मदत्त के पास रहता था। भिक्षुभो। एक समय कोसलराज दीघिति के हजाम ने कोसलराज दीघित को स्त्री सहित वाराणसी के एक कोने में कुम्हार के घर में अज्ञात वेश से परिव्राजक के रूप में वास करते देखा। देखकर जहाँ काशिराज ब्रह्मदत्त था वहाँ गया। जाकर काशिराज ब्रह्मदत्त से यह बोला

देव ! कोसलराज दीघिति स्त्री सहित वाराणसी० परिव्राजक रूप में पास कर रहा है।' "तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त ने आदमियों को आज्ञा दी"

तो भणे ! कोसलराज दिधिति को स्त्री सहित ले आओ!'

"अच्छा देव !' (कह) ये आदमी काशिराज ब्रह्मदत्त को उत्तर दे कोसलराज दीघिति को स्त्री सहित ले आये।

"तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त ने आदमियों को आज्ञा दी-

तो भणे ! कोसलराज दीघिति को स्त्री सहित मजबूत रस्सी से पीछे की ओर बाँह करकं अच्छी तरह बांध, छुरे से मुंडवा, जो रकी आवाज बाले नगाळे के साथ एक सड़क से दूभरी सड़क पर, एक चौरस्ते से दूसरे चौरस्ते पर धूमा दक्षिण दरवाजे से नगर के दक्षिण और चार टुकड़े कर चारों दिशाओं में बलि फेंफ दो।'

"अच्छा देव !' कह . . वे आदमी काशिराज ब्रह्मदत्त को उत्तर दे, कोसलराज दीघिति को स्त्री सहित मजबूत रस्सी से पीछे की ओर बाँह बाँध, छुरे से शिर मुंड वा जोर के आवाज वाले नगाडे के साथ एक सड़क से दूसरी सड़क पर, एक चौरस्ते से दूसरे चौरस्ते पर घुमाते थे। तब भिक्षुओ! दीर्घायु कुमार को यह हुआ-'मुझे माता-पिताका दर्शन किये देर हुई। चलो माता-पिताका दर्शन कर।' तब भिक्षुओ ! दीर्घायु कुमार ने वाराणसी में प्रवेश कर माता-पिता को मोटी रस्सी से बाह पीछे की ओर बंधे एक चौरस्ते से दूसरे चौरस्ते पर घुमाते देखा। देखकर जहाँ माता-पिता थे यहाँ गया। ..कोसलराज दीघिति ने दूरसे ही कुमार दीर्घायु को आते देखा। देखकर दीर्घायु कुमार से यह कहा

तात दीर्घायु ! मत तुम छोटा बळा देखो। तात दीर्घायु ! वैर से वैर शांत नहीं होता। अवैर से ही तात दीर्घायु वैर शांत होता है।'

"ऐसा कहने पर भिक्षुओ ! उन आदमियों ने कोसलराज दीघिति से यह कहा-'यह कोसलराज दीघिति उन्मत्तहो बक-झक कर रहा है। दीर्घायु (इसका कौन है ? किसको यह ऐसे कह रहा है-तात दीर्घायु, मत तुम छोटा बडा देखो. अवैर से ही तात दीर्घायु ! वैर शांत होता है।'

" 'भणे ! मैं उन्मत्त ही बकझक नहीं कर रहा हूँ बल्कि (मेरी बात को) जो विज्ञ है यह जानेगा।'

"भिक्षुओं ! दूसरी बार भी ० । तीसरी बार भी कोसलराज दीघिति ने कुमार दीर्घायु से यह कहा-

'तात छोटा बळा मत देखो० अवैर से ही तात दीर्घायु ! वैर शांत होता है।'

"तीसरी बार भिक्षुओ ! उन आदमियों ने कोसलराज दीघिति से यह कहा-

'यह कोसलराज दीघिति उन्मत्त हो ।'

भणे ! में उन्मत्त हो बक-झक नहीं कर रहा हूँ ।'

"तब भिक्षुओ ! वे आदमी कोसलराज दीघिति को स्त्री सहित एक सडक से दूसरी सड़क पर, एक चौरस्ते से दूसरे चौरस्ते पर धुमा, दक्षिण द्वार से ले जा, नग रके दक्षिण चार टुकळे कर चारों दिशाओं में बलि टाल गुल्म (=पहरेदार) रख चले गये।

"तब भिक्षुओ ! दीर्घायु कुमार ने वाराणसी में जा शराब ले पहरेदारों को पिलाया । जब ये मतवाले होकर पड गये तब लकळी ला चिता बना, माता-पिता के शरीर को चिता पर रख आग दे हाथ जोड तीन बार चिता की प्रदक्षिणा की।

"उस समय भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त ऊपर के महल पर था।...काशिराज ब्रह्मदत्त ने दीर्घाय को तीन बार चिता की प्रदक्षिणा करते देखा । देख कर उसको ऐसा हुआ-'निस्संशय यह आदमी कोसलराज दीघिति का जातिवाला या रक्त-संबंधी है। अहो मेरे अनर्थ के लिये किसी ने (यह बात मुझे नहीं) बतलाई ।'

"तब भिक्षुओं । दीर्घायु कुमार ! अरण्य में जा पेट भर रो आँसू पोंछ वाराणसी में प्रवेश कर अन्तःपुर (-राजा के रहने के दुर्ग) के पास को हथसारमें जा महावत से यह बोला-'आचार्य मैं (आपके) शिल्प सीखना चाहता हूँ।'

" 'तो भणे माणवक ! (=बच्चा) सीखो।'

"तब भिक्षुओं । दीर्घायु कुमार रात के भिनसार को दीर्घायु कुमार हथसार में मंजु स्वर से गाता और वीणा बजाता था । काशिराज ब्रह्मदत्त ने रात के भिनसार को उठकर हथसार में मंजू स्वर से गीत गाते और वीणा बजाते (किसी आदमी) को सुना । सुनकर आदमियों से पूछा

भणे । (यह) कौन रात के भिनसार को उठकर हथसारमें मंजू स्वर से गाता और बीणा बजाता था ?'

देव ! अमुक महावत का शिष्य माणवक रात के भिनसार को उठकर मंजु स्वर से गाता और बीणा बजाता था।

" तो भणे ! उस माणबक को यहाँ ले आओ।'

" 'अच्छा देव !' (कह) .. वे आदमी काशिराज ब्रह्मदत्त को उत्तर दे दीर्घायु कुमार को ले आये।"

"(राजा ने पूछा)-'भणे माणवक! क्या तू रात के भिनसार को उठकर मंजु स्वर से गाता और वीणा अजाता था?

""हाँ देव !' " "तो भणे माणवक ! गावो, और बीणा बजाओ।'

"अच्छा देव-(कह) दीर्घा यु कुमार ने काशिराज ब्रह्मदत्त को संतुष्ट करने की इच्छा से मंजु स्वर से गाया और बीणा बजाया।

"भणे माणवक! तू मेरी सेवामें रह। " 'अच्छा देव' (कह)..दीर्घायु कुमार ने काशिराज ब्रह्मदत्त को उत्तर दिया।

""तब भिक्षुओ ! दीर्घायु कुमार काशिराज ब्रह्मदत्त का पहले उठने वाला, पीछे-सोने-वाला, क्या-काम है-पूछनेवाला, प्रियचारी (और) प्रियवादी सेवक हो गया। तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त ने बहुत थोड़े ही समय बाद दीर्घायु कुमार को अपने अन्तरंग के विश्वसनीय स्थान पर स्थापित किया।

"(एक बार) . . काशिराज ब्रह्मदत ने दीर्घायु कुमार मे यह कहा-'तो भणे! माणवक रथ जोतो शिकार के लिये चलेंगे।'

" 'अच्छा, देव' (कह) . . , उत्तर दे, दीर्घायु कुमार ने रथ जोत, काशिराज ब्रह्मदत्त से यह कहा"देव !

रथ जुत गया। अब जिसका काल समझते हों (वैसा करें)

"तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त रथ पर चढ़ा और दीर्घायु कुमार ने रथ को हाँका। उसने ऐसे रथ हाँका कि सेना दूसरी और चली गई और रथ दूसरी ओर :

तब भिक्षुओ! काशिराज ब्रह्मदत्त ने दूर जाकर दीर्घायु कुमार से यह कहा

"'तो भणे माणवक ! रथ को छोड़ो। थक गया हूँ लेटूँगा।'

"अच्छा देव !' (कह) दीर्घायु कुमार काशिराज ब्रह्मदत्त को उत्तर दे, रथ छोड पृथ्वी पर पलथी मारकर बैठ गया। तब.. काशिराज ब्रह्मदत्त दीर्घायु कुमार की गोद में सिर रख सो गया। थका होने से क्षणभर में ही उसे नींद आ गई। तब भिक्षुओ ! दीर्घायु कुमार को यह हुआ--'यह काशिराज ब्रह्मदत्त हमारे बहुत से अनर्थो का करने वाला है। इसने हमारी सेना, वाहन, देश, कोश और कोष्ठागार को छीन लिया। इसने मेरे माता-पिता को मार डाला। यह समय है जब कि मैं वैर साधू।' -(सोच) म्यान से उसने तलवार निकाली। तब भिक्षुओ। दीर्घायु कुमार को यह हुआ–'मरने के समय पिता ने मुझे कहा था--'तात दीर्घायु ! मत तुम छोटा बळा देखो, तात दीर्घायु, वैर से वैर शान्त नहीं होता। अवैर से ही तात दीर्घायु ! वैर शान्त होता है। यह मेरे लिये उचित नहीं कि मैं पिता के वचन का उल्लंघन करूं', (सोच) म्यान में तलवार डाल दी। दूसरी बार भी० । तीसरी बार भी दीर्घायु कुमार को यह हुआ--'यह काशिराज. म्यान में तलवार डाल दी।

"तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त, भयभीत, उद्विग्न, शंकायुक्त, त्रस्त हो सहसा (जाग) उठा। तब...दीर्घायु कुमारने काशिराज ब्रह्मदत्तसे यह कहा-देव ! क्यों तुम भयभीत जाग उठे ?'

भणे माणवक ! मुझे स्वप्नमें कोसलराज दीघिति के पुत्र दीर्घायु कुमार ने खड्ग से (मार) गिराया था, इसी लिए मैं भयभीत० (जाग) उठा।'

"तब भिक्षुओ ! दीर्घायु कुमार ने बाएँ हाथ से काशिराज ब्रह्मवत्त के सिरको पकड दाहिने हाथ में खड्ग ले, काशिराज ब्रहादत्त से यह कहा

'देव ! मैं हूँ कोसलराज दीघित का पुत्र दीर्घायु कुमार। तुम हमारे बहुत अनर्थ करने वाले हो। तुमने हमारी सेना, वाहन, देश, कोश, और कोष्ठागार को छीन लिया। तुमने मेरे माता पिता को मार डाला यही समय है कि मैं (पुराने) बैर को साधूं।'

"तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त दीर्घायु कुमारके पैरों में सिरसे पड , दीर्घायु कुमार से यह बोला-'तात दीर्घायु ! मुझे जीवन दान दो, तात दीर्घायु मुझे दान दो।'

* 'देव को जीवन दान मैं दे सकता है, देव भी मुझे जीवन दान दें।' " तो तात दीर्घायु ! तुम मुझे जीवन दान दो, मैं तुम्हें जीवन दान देता हूं।'

"तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त और दीर्घायु कुमार ने एक दूसरेको जीवन दान दिया और (एक ने दूसरे का) हाथ पकळा, और द्रोह न करने की शपथ की।

"तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त ने दीर्घायु कुमार से यह कहा" 'तो तात ! दीर्घायु ! रथ जोतो चलें।'

"'अच्छा देव !'-(कह). . .दीर्घायू कुमार ने काशिराज ब्रह्मवत्त को उत्तर दे रथ जोत काशिराज ब्रह्मादत्त से यह कहा

" 'देव ! तुम्हारा रथ जुत गया। अब जिसका समय समझो (वैसा) करो।'

"तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्त रथ पर चढा और दीर्घायु कुमार ने रथ हांका। (उसने) रथ को ऐसा हाँका कि थोळी ही देर में सेना से मिल गया। तब भिक्षुओ . काशिराज ब्रह्मदत्त ने वाराणसी में प्रवेशकर अमात्यों और परिषदों को एकत्रितकर यह कहा

"भणे यदि कोसलराज दीघिति के पुत्र दीर्घायु कुमार को देखो तो उसका क्या करोगे ?'

किन्हीं किन्हीं ने कहा-'हम देव ! हाथ काट लेंगे'; 'हम देव ! पैर काट लेंगे', 'हम देव ! हाथ पैर काट लेंगे'; 'हम देव ! कान काट लेंगे'; 'हम देव ! नाक काट लेंगे', 'हम देव नाक-कान काट लेंगे', 'हम देव ! सिर काट लेंगे।

"'भणे यह कोसलराज दीघिति का पुत्र दीर्घायु कुमार है। इसका तुम कुछ नहीं करने पाओगे इसने मुझे जीवन-दान और मैने इसे जीवन-दान दिया।'

"तब भिक्षुओ ! काशिराज ब्रह्मदत्तने दीर्घायु कुमा र मे यह कहा

" 'तात दीर्घायु ! पिता ने मरने के समय जो तुमने कहा,-तात दीर्घायु। यह तुम छोटा बळा देखो० अवैर से ही तात दीर्घायु ! वैर शान्त होता है क्या सोचकर तुम्हारे पिताने ऐसा कहा?'

"मत बळा-'मत चिरकाल तक वैर करो' यह सोच देव ! मेरे पिता ने मरने के समय 'मत बडा' कहा। और जो देव ! मेरे पिता ने मरने के समय कहा-'मत छोटा'-(सो) मत जल्दी मित्रों से बिगाड करो यह सोच मेरे

पिताने मरने के समय कहा-मत छोटा। और जो देव ! मेरे पिता ने मरने के समय कहा-वर से वैर नहीं शान्त होता; अवैर से ही वैर शान्त होता है'-(सो) देव ने मेरे माता-पिताको मारा यह (सोच) यदि मैं देव को प्राण से मारता तो जो देव के हित चाहने वाले है वे मुझे प्राण से मार देते। और (फिर) जो मेरे हित चाहने वाले हैं वे उनको प्राण से मारते इस प्राकर यह वैर वैर से शान्त न होता। किन्तु इस वक्त देव ने मुझे जीवन-दान दिया और मैंने देव को जीवन-दान दिया। इस प्रकार अवैर से वह वैर शान्त होता था। देव ! यह समझ मेरे पिता ने मरने के समय कहा-तात दीर्घायु ! अवैर से ही वैर शान्त होता है।'

"तब भिक्षुओं काशिराज ब्रह्मदत्त ने-'आश्चर्य है रे! अद्भुत है रे ! कितना पंडित यह दीर्घायु कुमार है जो कि पिता के संक्षेप से कहे का (इतना) विस्तार से अर्थ जानता है !'-(कह उसके) पिता की सेना, वाहन, देवा, कोश, कोष्ठागारको लोटा दिया (और अपनी) कन्या को प्रदान किया।

"भिक्षुभो! दंड ग्रहण करने वाले, शस्त्र ग्रहण करने वाले उन क्षत्रिय राजाओं का भी ऐसे आपस में मेल हो (तो) क्या भिक्षुओ यह शोभा देता है कि ऐसे स्वाख्यात (अच्छी तरह व्याख्यात) धर्म में प्रबजित हुए तुम्हारा मेल (न) हो।"

"दूसरी बार भी। "तीसरी बार भी भगवान ने उन भिक्षुओं से यह कहा" बस भिक्षुओ! मत झगळा, कलह, विग्रह, विवाद करो।" तीसरी बार भी उस अधर्मवादी भिक्षुने भगवान से यह कहा

"भन्ते। भगवान। धर्मस्वामी! रहने दें, परवाह मत करें ! भन्ते भगवान, धर्मस्वामी दृष्ट-धर्म (=इसी जन्म) के सुख के साथ विहार करें। हम इस झगळे, कलह, विग्रह, विवादको जान लेंगे।"

तब भगवान-'यह मोघ पुरुष परियादिन्न रूप (अत्यन्त लिप्त) है इनको समझाना सुकर नहीं-(सोच) आश्रम से उठ चल दिये।

(इति) दीर्घायु भाणबार॥ १॥

(८) भिक्षु-संघका परित्याग

तब भगवान पूर्वाहण समय (बस्त्र) पहनकर पात्र-चीवर ले कौशाम्बी में भिक्षाचार कर, भोजनकर पिड-पात से उठ, आसन समेट, पात्र चीवर ले, खडे ही खड़े इस गाथा को बोले

"बड़े शब्द करने वाले एक समान (यह) जन कोई भी अपने को बाल (अज्ञ) नहीं मानते ;

संघ के भंग होने पर (और) मेरे लिये मन में नहीं करते ।।

मूढ, पंडितस दिखलाते, जीभपर आई बातको बोलने वाले ;

मन-चाहा मुख फेलाना चाहते है। जिस (कराड) से (अयोग्य मार्गपर)

ले जाये गये है, उसे नहीं जानते ।।

'मुझे निन्दा', 'मुझे मारा', 'मुझ जीता', 'मुझे त्यागा'।

(इस तरह) जो उसको नहीं बांधतं, उनका वैर शांत हो जाता है ।

वैर से वैर यहाँ कभी शांत नहीं होता।

अ-वैर से (ही) शांत होता है, यही सनातन-धर्म है।

दूसरे (अपंडित) नही जानते, कि हम यहाँ मृत्यु को प्राप्त होंगे।

जो वहां (मृत्यु के पास) जाना जानते हैं, वे (पंडित) बुद्धिगत (कलहों को) शमन करते है ।।

हड़ी तोडने वालों, प्राण हरने वालों, गाय-घोळा-धन-हरने वालों ।

राष्ट्र को विनाश करने वालों (तक का भी मेल होता है।

यदि नम्र-साधु-विहारी (पुरुष) सहचर-सहायक (साथी) मिले।

तो सब झगळों को छोड प्रसन्न हो बुद्धिमान उसके साथ विचरे ।।

यदि नम्र साधु-विहारी धीर सहचर सहायक न मिले ।

तो राजाकी भाँति विजित राष्ट्र को छोड , उत्तम मातंग-राज की भाँति अकेला विचरे ।

अकेला विचरना अच्छा है, मूर्ख से मित्रता नहीं (अच्छी)।

वे पर्वाह हो उत्तम मातंग-(नाग) राजकी भांति अकेला विचरे, और पाप न करे ।।"

२-बालकलोगाकार ग्राम

तब भगवान खळे खळे इन गाथाओंको कहकर, जहाँ बालक-लोणकार ग्राम था, वहाँ गये। उस समय आयुष्यमान् भृगु बालक-लोणकार ग्राम में वास करते थे। आयुष्मान भृगु ने दूर से ही भगवान को आते देखा। देखकर आसन बिछाया, पैर धोने को पानी भी (रखा)। भगवान बिछाए आसन पर बैठे। बैठकर चरण धोये। आयुष्मान भृगु भी भगवान को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुये आयुष्मान भृगु से भगवान ने यों कहा-

"भिक्षु! क्या खमनीय (-ठीक) तो है, क्या यापनीय (अच्छी गुजरती) तो है ? पिंड (-भिक्षा)के लिये तो तुम तकलीफ नहीं पाते ?"

"खमनीय है भगवान! यापनीय है भगवान ! मैं पिडके लिये तकलीफ नहीं पाता।"

३-प्राचीनवंशदाव

तब भगवान आयुष्मान भृगु को धार्मिक कथा से: समुत्तेजित कर०, आसन से उठकर, जहाँ प्राचीन-वंश-दाब है, वहाँ गये। उस समय आयुष्मान अनुरुद्ध, आयुष्मान नन्दिय और आयुष्मान किम्बिल प्राचीन-वंश-दाव में बिहार करते थे। दाव-पालक (-वन-पाल) दूरसे ही भगवान को आते देखा। देखकर भगवान से कहा

"महाश्रमण ! इस दाव में प्रवेश मत करो। यहाँ पर तीन कुल-पुत्र यथाकाम (मौज से) विहर रहे हैं उनको तकलीफ मत दो।"

आयुष्मान अनुरुद्ध ने दाव-पाल को भगवान के साथ बात करते सुना। सुनकर दाव-पाल से यह कहा

"आवुस ! दाव-पाल ! भगवान को मत मना करो। हमारे शास्ता भगवान आये हैं।"। तब आयुष्मान अनुरुद्ध जहाँ आयुष्मान नन्दिय और आयु० किम्बल थे वहाँ गये। जाकर बोले...

"आयुष्मानो! चलो आयुष्मानो ! हमारे शास्ता भगवान आ गये।

तब आ० अनुरुद, आ० नन्दिय, आ० किम्बल भगवान की अगवानी कर, एक ने पात्र-चीवर ग्रहण किया, एक ने आसन बिछाया, एक ने पादोदक रक्षा। भगवान ने बिछाये आसन पर बैठ पैर धोयें। वे भी आयुष्मान भगवान को अभिवादन कर, एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान अनुरुद्ध से भगवान ने कहा

"अनुरुद्धो ! खमनीय तो है? यापनीय तो है ? पिडके लिये तो तुम लोग तकलीफ नहीं पाते ?"

खमनीय है, भगवान ! ०"

"अनुरुद्धो। क्या एकत्रित, परस्पर मोद-सहित, दूध-पानी हुए, परस्पर प्रिय-दृष्टि से देखते, विहरते हो?"

"हाँ भन्ते ! हम एकत्रित।" "तो कैसे अनुरुदो ! तुम एकत्रित?"

"भन्ते ! मुझे, यह विचार होता है-'मेरे लिये लाभ है ! मेरे लिये सुलाभ प्राप्त हुआ है, जो ऐसा स-साहाचारियों (गुरु भाइयों के साथ विहरता हूँ। भन्ते ! इन आयुष्मानों में मेरा कायिक कर्म अन्दर और बाहर से मित्रता-पूर्ण होता है; वाचिक-कर्म अन्दर और बाहर मे मित्रता-पूर्ण होता है; मानसिम कर्म अन्दर और बाहर । तब भन्ते ! मुझे यह होता है—क्यों न में अपना मन हटा कर, इन्हीं आयुष्मानों के चित्त के अनुसार बर्तू' । सो भन्ते ! मै अपने चित्त को हटाकर इन्हीं आयुष्मानों के चित्तों का अनुवर्तन करता हूँ। भन्ते ! हमारा शरीर नाना है, किन्तु चित एक..."

आयुष्यमान नन्दिय ने भी कहा-"भन्ते ! मुझे यह होता है।" आयुष्मान किम्बिल ने भी कहा-भन्ते ! मुझे यह ।

"साधु, साधु, अनुरुद्धो ! अनुरुद्धो ! क्या तुम प्रमाद-रहित, आलस्य-रहित, संयमी हो, विहरते हो?"

भन्ते ! हाँ! हम प्रमाद-रहितः।"

"अनुरुचो ! तुम कैसे प्रमाद-रहित०?" "भन्ते ! हमारे में जो पहिले ग्राम से भिक्षाचार करके लोटता है, यह आसन लगाता है, पीने का पानी रखता है, कूळे की थाली रखता है। जो पीछे गाँव से पिंडचार करके लौटता है, (वह) भोजन (में से जो) बचा रहता है, यदि चाहता है, खाता है, (यदि) नहीं चाहता है, तो (ऐसे) स्थान में, जहां हरियाली न हो, छोड देता है, या जीव-रहित पानी में छोड देता है । आसनों को समेटता है । पीने के पानी को समेटता है । कूड़े की थाली को धोकर समेटता है। खाने की जगह पर झाळू देता है । पानी के घळे, पीने के घळे, या पाखाने के घळे जिसे खाली देखता है

उसे (भरकर) रख देता है । यदि वह उससे होने लायक नहीं होता तो हाथ के इशारे से, हाथ के संकेत (-हस्थ-विलंधक)से दूसरों को बुलाकर, पानी के घळे या पीने के घळे को (भरकर) रखवाता है। भन्ते | हम उसके लिये वाग्-युद्ध नहीं करते । भन्ते ! हम पांचवें दिन सारी रात धर्म-सम्पन्धी कथा करते बैटते हैं। इस प्रकार भन्ते ! हम प्रमाद-रहितः ।"

'साधु, साधु, अनुरूद्धो ! अनुरुद्ध ! इस प्रकार प्रमाव-रहित, निरालस, संयमी हो विहरते,

क्या तुम्हें 'उत्तर-मनुष्य-धर्म अलमार्य-ज्ञान-दर्शन-विशेष अनुकूल-विहार प्राप्त है ?"

४-पारिलेय्यक

जब भगवान आयुष्मान अनुरुद्ध, आयुष्मान नन्दिय, और आयुष्मान किम्बिल को धार्मिक कथा द्वारा समुत्तजित, सम्प्रहर्षितकर, आसन से उठ जिधर पारिलेय्यक है उधर चारिका के लिये चल पडे । क्रमशः चारिका करते जहाँ पारिलेय्यक है वहाँ पहुँचे। वहाँ भगवान पारिलेय्यक में रक्षित वन-खंड के भद्रशाल (वृक्ष) के नीचे विहार करते थे।

(९) एकान्त निवास का-आनन्द

तब एकान्त में स्थित हो विचारमग्न होते समय भगवान के चित्त में यह विचार हुआ-'मैं पहले उन झगडा, कलह, विवाद, बकवाद और संघ में अधिकरण (मुकदमा) पैदा करने वाले कौशाम्बीके भिक्षुओं से आकीर्ग (=घिरा) हो अनुकुलता के साथ नहीं बिहार कर सकता था। सो में अब उन० कौशाम्बी के भिक्षुओं से अलग, अकेला, अद्वितीय हो अनुकूलता के साथ बिहार कर रहा हूँ। एक हस्तिनाग (हाथी का पट्टा) भी हाथी, हथिनी, हाथी के कलभ (तरूण) और हाथी के छउआ (छाप=शाव) से आकीर्ण हो बिहरता था और हाथी के छउआ (छापः शावक) से आकीर्ण हो बिहरता था। शिरकटे तृणों को खाता था। टूटी-भांगी ... शाखाओं...को (वह) खाता था। मैले पानी को पीता था। अवगाह (जलाशय) उतर जाने पर हथिनियाँ उसके शरीर को रगडती चलती थीं। (ऐसे) आकीर्ण (हो) (वह) दुख से अनुकूलताले विहार करता था। तब उस महागज को हुआ, इस वक्त मैं हाथी ०, आकीर्ण० हूँ०। क्यों न मैं गण से अकेला ?

तब वह हस्ति-नाग यूथ से हटकर, जहाँ पारिलेय्यक-रक्षित वन-खंड भद्र-शाल-मूल था०, जहाँ भगवान थे, वहाँ आया। वहाँ आकर वह नाग जो हरित स्थान होता था, उसे अहरित-करता था। भगवान के लिये सूंड से पानी का, पीने का (पानी) रखता था। तब एकान्तस्थ ध्यानस्थ भगवान के मन में यह वितर्क उत्पन्न हुआ—मैं पहिले भिक्षुओं० से अन-आकीर्ण बिहरता था, अनुकलता से न विहरता था। सो मैं अब भिक्षुओं ० से अन्-आकीर्ण विहर रहा हूँ। अन्-आकीर्ण हो, सुख से, अनुकूलता से विहार कर रहा हूँ। उस हस्ति-नाग को भी मन में यह वितर्क उत्पन्न हुआ-मैं पहिले हाथियों ० अन्-आकीर्ण सुख से अनुकूल से विहर रहा हूँ। तब भगवान ने अपने प्र-विवेक (=एकान्त सुख) को जान, और (अपने) चित्त से उस हस्ति-नाग के चित्त के वितर्क को जानकर, उसी समय यह उदान कहा-

"हरीस जैसे दाँत वाले हस्ति-नाग से नाम (-बुद्ध) का चित्त समान है,

जो कि वन में अकेला रमण करता है।"

५-श्रावस्ती

तब भगवान पारिलेयय्यक में इच्छानुसार विहार कर, जिधर श्रावस्ती थी, उधर चारिका के

लिये चल दिये। क्रमशः चारिका करते जहाँ श्रावस्ती थी, वहाँ गये। वहाँ भगवान श्रावस्ती में अनाथ पिडिक के आराम जेतवन में विहार करते थे। तब कौशाम्बी के उपासकों ने (विचारा) "यह अय्य (-भिक्षु) कौशाम्बी के भिक्षु, हमारे बळे अनर्थ करने वाले हैं। इनसे ही पीळित हो भगवान चले गये। हाँ ! तो अब हम अय्य कोसम्बक भिक्षुओंको न अभिवादन करें, न प्रत्युत्थान करें, न हाथ जोड ना-सामीची कर्म करें, न सत्कार करें, न गौरव करें, न मानें, न पूजे; आने पर भी पिड (=भिक्षा) न दें। इस प्रकार हम लोगों द्वारा अ-सकृत, अ-गुरुकृत, अ-मानित, अ-पूजित, असत्कार-वश चले जायेंगे, या गृहस्थ बन जायेंगे, या भगवान को जाकर प्रसन्न करेंगे।"

तब कौशाम्बी-वासी उपासक कौशाम्बी-वासी भिक्षुओं को न अभिवादन करते। तब कौशाम्बी वासी भिक्षुओं ने कौशाम्बी के उपासकों से असत्कृत हो कहा

"अच्छा आवुसो! हम लोग श्रावस्ती में भगवान के पास इस अगळे (-अधिकरण) को शान्त करें।" तब कौशाम्बी-वासी भिक्षु आसन समेटकर पात्र-चीवर ले, जहाँ श्रावस्ती थी, यहाँ गये।

२-अधर्मवादी और धर्मवादी

आयुष्मान सारिपुत्र ने सुना--"वह भंडन-कारक कलह-कारक-विवाद-कारक, भस्स (-भष)-कारक, संघ में अधिकरण (झगडा) कारक, कौशाम्बी वासी भिक्षु श्रावस्ती आ रहे है।" तब आयुष्मान सारिपुत्र जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। जाकर भगवान को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान सारिपुत्रने भगवान से कहा- "भन्ते ! वह भंडनन-कारक. कौशाम्बी-वासी भिक्षु श्रावस्ती आ रहे हैं, उन भिक्षुओं के साथ में कैसे बर्तूं?"

“सारिपुत्र ! तो तू धर्मके अनुसार बर्त।"

"भन्ते ! मैं धर्म (नियमानुसार) या अधर्म कैसे जाने ?"

(१) अधर्मवादी की पहिचान

"सारिपुत्र ! अठारह बातों (-वस्तु) से अ-धर्मवादी जानना चाहिये। 'सारि-पुत्र ! भिक्षु

(१) अ-धर्म को धर्म (-सूत्र) कहता है।

(२) धर्मको अ-धर्म कहता है।

(३) अ-विनय को विनय कहता है।

(४) विनय को अ-विनय कहता है।

(५) तथागत-द्वारा अ-भाषित=अ-लपित को, तथागत-द्वारा भाषित=तपित कहता है।

(६) ०भाषित लपित को, अ-भाषित=अ-लपित कहता है।

(७) तथागत-द्वारा अन-आचरित को० आचरित कहता है।

(८) तथागत-द्वारा आचरित को अनआचरित कहता है।

(९) तथागत-द्वारा अ-अज्ञप्त (=अ-विहित) को ०प्रज्ञप्त कहता है।

(१०) प्रज्ञप्तको अ-प्रज्ञप्त०। (११) अन-आपत्ति को आपत्ति (-दोष) कहता है।

(१२) आपत्ति को अन-आपत्ति कहता है।

(१३) लघु (छोटी)-आपत्ति को गुरु (-बळी)-आपत्ति कहता है।

(१४) गुरु-आपत्ति को लघु-आपत्ति कहता है।

(१५) स-अबशेष (अपूर्ण) आपत्तिको अन-अवशेष (पूर्ण) आपत्ति कहता है।

(१६) अन-अवशेष आपत्ति को स-अवशेष आपत्ति कहता है।

(१७) दुःस्थौल्य (-दुराचार) आपत्ति को अ-दुःस्थौल्य आपत्ति कहता (-दीपित प्रकाषित करता है)।

(१८) दुःस्थौल्य आपत्ति को अ-दुःस्थौल्य आपत्ति कहता है।

(२) धर्मवादो की पहिचान

"अठारह वस्तुओं से सारि-पुत्र धर्म-वादी जानना चाहिये।

'सारिपुत्र ! भिक्षु

(१) अधर्मको अधर्म कहता है।

(२) धर्मको धर्मः ।

(३) अ-विनय को अ-विनयः

। (४) विनय को विनय० ।

(५) अ-भाषित-अ-लपितः ।

(६) भाषित -लपित को भापित लपितः ।

(७) अन-आचरित को अन-आचरितः ।

(८) आचरित को आचरित।

(९) अ-प्रज्ञप्त को अ-प्रज्ञप्त० ।

(१०) प्रज्ञप्त० को प्रज्ञप्त० ।

(११) अन-आपत्ति को अन-आपत्तिः ।

(१२) आपत्ति को आपत्ति० ।

(१३) लघु-आपत्ति को लघु-आपत्ति।

(१४) गुरु आपत्ति को गुरु-आपत्ति।

(१५) स-अवशेष आपत्ति को स-अवशेष आपत्ति।

(१५) अन-अवशेष आपत्ति को अन-अवशेष आपत्तिः।

(१७) दुःस्थौल्य आपत्तिको दुःस्थौल्य आपत्तिः।

(१८) अ-दुःस्थौल्य आपत्ति को अ-दुःस्थौल्य आपत्ति

आयुष्मान महा मोद्दगल्लायन ने सुना--'बह भंडन कारक ०

आयुष्मान महाकाश्यप ने०

महा कात्यायन मे सुना०

महा कोट्ठीन (कोष्ठिल) ने सुना०

महा कपिन ने सुना०

महा चुन्द ० अनुरुद्ध ० रेवत० उपाली ० आनन्द ० राहुल०।

महा प्रजापती गौतमी ने सुना–'वह भंडन-कारकः।' "भन्ते ! मैं उन भिक्षुओं के साथ कैसे बर्तूं?"

गौतमी ! तू दोनों ओर का धर्म (बात) सुन। दोनों ओर का धर्म सुनकर, जो भिक्षु धर्मवादी हों, उनकी दृष्टि, शान्त, रुचि, पसन्द कर। भिक्षुनी-संघ को भिक्षु-संघ से जो कुछ अपेक्षा करना है, वह सब धर्मवादी से ही अपेक्षा करना चाहिये।"

अनाथ-पिण्डिक गृह-पति ने सुना—'वह भंडन-कारक।' "भन्ते ! मैं उन भिक्षुओंके साथ कैसे वर्त"

गृहपति ! तू दोनों ओर दान दे। दोनों ओर दान देकर दोनों ओर धर्म सुन। दोनों ओर धर्म सुनकर, जो भिक्षु धर्म-वादी हो, उनकी दृष्टि (-सिद्धान्त) क्षान्ति (= औचित्य), रुचि को ले, पसन्द कर।"

"विशाखा मृगार-माता ने सुना-जो वह। "भन्ते ! मैं उन भिक्षुओं के साथ केसे बर्तूं ?"

"विशाखा ! तू दोनों ओर दान दे। ० रुचि को ले पसन्दकर।"

तब कौशाम्बी-वासी भिक्षु क्रमशः जहाँ श्रावस्ती थी, वहाँ पहुँचे। तब आयुष्मान सारिपुत्र ने जहाँ भगवान थे, वहाँ जा. "भन्ते ! वह भंडन कारक. कौशाम्बी-वासी भिक्षु श्रावस्ती आ गये। भन्ते ! उन भिक्षुओं को आसन आदि कैसे देना चाहिये ?"

"सारिपुत्र ! अलग आसन देना चाहिये।" "भन्ते ! अदि अलग न हो, तो कैने करना चाहिए?"

'सारिपुष | तो अलग बनाकर देना चाहिये। परन्तु सारिपुत्र ! बुद्धतर भिक्षु का आसन हटाने (के लिये) मैं किसी प्रकार भी नहीं कहता। जो हटाये उसको 'दुष्कृति' की आपत्ति।

"भन्ते ! आमिष (= भोजन आदि) के (विषयमें) कैसे करना चाहिये ?" "सारिपुत्र ! आमिष सब को समान बाँटना चाहिये।"

३-संघ-सामग्री(= ० एकता)

तब धर्म और विनय को प्रत्यवेक्षा (=मिलान, खोज) उस उत्क्षिप्त भिक्षु को (विचार) हुआ —'यह आपत्ति (-दोष) है अन-आपत्ति नहीं है। मैं आपन्न (-आपत्ति-युक्त) हूँ, अन आपन्न नहीं हूँ। मैं उत्क्षिप्त (='उत्क्षेपण दंड से दंडित) हूँ, अन-उत्क्षिप्त नहीं हूँ। अ-कोप्य स्थानार्ह धार्मिक कर्म (-न्याय) से में उत्क्षिप्त हूँ।' तब बह उत्क्षिप्त भिक्षु (अपने)...अनुयायियों के पास गया,...बोला-'यह आपत्ति है आवुसो ! आओ आयुष्मानो मुझे मिला दो।।० तब वह उरिक्षप्त अनुयायी भिक्षु उत्क्षिप्त भिक्षुको लेकर जहाँ भगवान थे, वहाँ गये, जाकर भगवान को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठकर उन भिक्षुओंने भगवान से यह कहा

"भन्ते ! यह उत्क्षिप्त भिक्षु कहता है-'आवुसो ! यह आपत्ति है अन-आपत्ति नहीं ०, आओ आयुष्मानो ! मुझे (संघ में) मिला दो।' भन्ते ! तो कैसे करना चाहिये?"

__ "भिक्षुओ ! यह आपत्ति है, अन-आपत्ति नहीं। यह भिक्षु आपन्न है, अन-आपन नहीं है। उत्क्षिप्त है अन-उत्क्षिप्त नहीं है। अ-कोप्य स्थानार्ह-धार्मिक कर्म से उत्क्षिप्त है। भिक्षुओ ! चूंकि यह भिक्षु आपन्न है, उत्क्षिप्त है, और आपत्ति (=दोष देखता है; अतः इस भिक्षु को मिला लो।"

तब उत्क्षिप्त के अनुयायी भिक्षुओं ने उस उत्क्षिप्त भिक्षु को मिला (-ओसारण) कर, जहाँ उत्क्षेपक भिक्षु थे, वहाँ गये। जाकर उत्क्षेपक भिक्षुओं से कहा

"आवुसो ! जिस वस्तु (-बात) में संघ का भंडन कलह, विग्रह, विवाद हुआ था, संघ (फूट) भेद=संघराजी-संघ-व्यय व स्थान=संघ-ना ना करण हुआ था। सो (उस विषय में) यह भिक्षु आपन्न है, उत्क्षिप्त है, अव-सा रित (-मिला लिया गया है। हाँ तो | आवुसो! हम इस वस्तु (मामला, बात) के उप-शमन (फैसला, मिटाना) के लिये संघ की सामग्री (मेल) करें।"

तब वह उत्क्षेपक (अलग करने वाले) भिक्षु जहाँ भगवान थे,.. जाकर भगवान को अभिवादन कर...एक ओर बैठ...भगवान से बोले।

(१) संघ सामग्री का तरीका

"भन्ते ! वह उत्क्षिप्त-अनुयायी भिक्षु ऐसा कहते है-'आवृसो ! जिस वस्तु में० संघकी सामग्री करे।' भन्ते ! कैसे करना चाहिये ?" ।

"भिक्षुओ! चूंकि वह भिक्षु आपन्न, उत्क्षिप्त, पश्यी (दर्शी-आपत्ति देखने मानने वाला) और अब-सारित है। इसलिये भिक्षुओ ! उस वस्तु के उप-शमन के लिये संघ, संघकी सामग्री करे ।

और वह इस प्रकार करनी चाहिये-

रोगी निरोगी सभी को एक जगह जमा होना चाहिये

किसी को (बदला) भेजकर, छन्द (-वोट) न देना चाहिये ।

जमा होकर, योग्य, समर्थ भिक्षु-द्वारा संघ को ज्ञापित (-सूचित-संबोधित) करना चाहिये

क. ज्ञप्ति-'भन्ते ! संघ मुझे सुने । जिस वस्तु में संघ में भंडन, कलह, विग्रह, विवाद हुआ था; सो (उस विषयमें) यह भिक्षु आपन्न है, उत्क्षिप्त, पश्यी, अब-सारित है । यदि संघ उचित (-पत्तकल्ल) समझे, तो संघ उस वस्तु के उपशमन के लिये संघ-सामग्री करे-यह ज्ञप्ति (-सूचना) है।'

ख. अनुश्रावण-(१) 'भन्ते ! संघ मुझे सुने-जिस वस्तु में०अवसारित है। संघ उस वस्तु के उपशमन के लिये संघ-सामग्री कर रहा है । जिस आयुष्मान को उस वस्तु के उपशमन के लिये संघ सामग्री करना, पसन्द है, वह चुप रहे, जिसको नहीं पसन्द है, वह बोले । (२) दूसरी बार भी० । (३) तीसरी बार भी।

ग. धारणा-.-संघ ने उस वस्तु के उपशमन के लिये संघ सामग्री (-फूटे संघ को एक करना) की; संघ-राजी=०संघ-भेद निहत (नष्ट) हो गया। संघ को पसन्द है, इसलिये चुप है- यह में समझता हूँ।

(२) नियम-विरुद्ध संघ-सामग्री

उसी समय उपोसथ करना चाहिये और प्रातिमोक्ष उद्देश (-प्रातिमोक्ष का पाठ) करना चाहिये।

तब आयुष्मान उपालि जहाँ भगवान थे वहाँ गये। जाकर भगवान को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान उपालि ने भगवान से यह कहा-

"भन्ते ! जिस वस्तु से संघ में झगळा, कलह, विग्रह, विवाद, संध-भेद (संघ में फूट). संघ राजी=संघ-व्यवस्थान, संघ का बिलगाव हो, संघ उस वस्तु को बिना निश्चय (फैसला) किये अमूल (-बेजड की बात) से मूल को पा संघ-सामग्री (=सारे संघ को एक करना) करे। तो भन्ते। क्या वह मंघ-सामग्री धर्मानुसार है?

"उपालि ! जिस वस्तु से संघ में अमुल से मूल की पा संघ-सामग्री करता है, उपालि! वह संघ सामग्री धर्म विरुद्ध है।"

(३) नियमानुसार संघ-सामग्री

"भन्ते ! जिस वस्तु में संघ में झगळा हो, संघ उस वस्तु का विनिश्चय कर मूल से मूल को पकड (यदि) संघ-सामग्री करे, तो भन्ते ! क्या वह संघ-सामग्री धर्मानुसार है?"

"उपालि ! • वह संघ-सामग्री धर्मानुसार है।"

(४) दो प्रकार की संघ-सामग्री

"भन्ने ! संघ-सामन्त्री कितनी है?"

"उपालि ! संघ-सामग्री दो है-

(१) उपालि !

(एक) संघ-सामग्री अर्थ-रहित किन्तु व्यंजन-युक्त है।

(२) उपालि (एक) संघ-सामग्री अर्थ-युक्त और व्यंजन-युक्त है।

उपालि ! कौनसी संघ-सामग्री अर्थ-रहित किन्तु व्यंजन-युक्त है? उपालि ! जिस वस्तु मे संघ में झगळा होता है संघ उस वस्तु का बिना निर्णय किये, अमूल से मूल को पा संघ-सामग्री करता है, उपालि ! यह कही जाती है। अर्थ-रहित, व्यंजन-युक्त संघ-सामग्री। उपालि! कौनसी सामग्री , अर्थ-युक्त और व्यंजन-युक्त है?

उपालि ! जिस वस्तु मे संघ में झगळा होता है, संघ उस वस्तु का निर्णय कर मूल से मूल को पा संघ-सामग्री करता है। उपालि ! यह कही जानी है अर्थ-युक्त और व्यंजन युक्त (भी)।–

उपालि ! यह दो मंघ-सामग्री है।"

४-योग्य विनयधर की प्रशंसा

तब आयुष्मान उपालि आसन मे उठ, एक कंधेपर उत्तरासंग कर जिधर भगवान थे उधर हाथ जोड भगवान से गाथा में कहा-

"संघके कर्तव्यों और मन्त्रणाओं, उत्पन्न अर्थों और विनिश्चयों (फैसलों) के समय किस प्रकार का पुरुष बळा उपकारक (होता है);

(और) कैसे भिक्षु विशेषतः ग्रहण करने लायक होता है?

(जो) प्रधान शीलों में दोष-रहित, अपेक्षित आचारवाला (और) इन्द्रियों में सुसंयमी हो, विरोधी भी धर्म से (जिसे) नहीं (दोषी) कह सकते, उसमें वैसी (कोई बुराई) नहीं होती जिसको लेकर उसे बोलें। वह वैसे सदाचार को विशुद्धता में स्थित है, विशारद है, परास्त करके बोलता है, सभा में जाने पर न स्तब्ध (-गुम) होता है, न विचलित होता है, विहितों की गणना करते (किसी) बात को नहीं छोडता ॥

वैसे ही सभा प्रश्न पूछने पर, न सोचने लगता है न चुप होता है। वह पंडित काल से प्राप्त उत्तर देने योग्य वचन को, कह, विज्ञों की सभा का रंजन करता है। (जो) वृद्धतर भिक्षुओं में आदर-युक्त, अपने सिद्धान्तों में विशारद, मीमांसा करने में समर्थ, कथन करने में होशियार, और विरोधियों के भाव को जानने वाला (होता है) । विरोधी जिससे निग्रह किये जाते हैं, महाजन' (जिससे बातको) समझ पाते हैं, बिना हानि किये प्रश्न का उत्तर देते वह अपने सम्प्रदाय (और) सिद्धान्त को नहीं त्यागता।। (संघके) दूत-कर्म में समर्थ, अच्छी तरह सीखा हआ, और संघ के कृत्यों में जैसा उसको कहें, भिक्षुगण द्वारा भेजे जाने पर (वैसा ही उस) वचन को करता है, और 'मैं करता हूँ'--वह अभिमान नहीं करता। जिन जिन बातों में आपत्ति (अपराध) युक्त होता है, जैसे उस आपत्ति से मुक्ति होती है, ये दोनों (भिक्षु-भिक्षुणी) विभंग उसको अच्छी तरह आते है, आपत्ति से छूटने के पद का कोविद (होता है) । जिन का आचरण करते निस्तारण को प्राप्त होता है,

और जैसे (दोषवाली) वस्तु से निस्सारित होता है, उस (आचरण) को करने वाले प्राणी का (जैसे ओसारण होता है) विभंग का कोविद, इसे भी जानता है ॥ वृद्धतर भिक्षुओं में आदर-युक्त, नवों स्थविरों और मध्यमों में (भी); महाजन के अर्थ की रक्षा में पंडित, ऐसा भिक्षु यहाँ विशेषतः ग्रहण करने लायक (है)॥"

कोसम्बकक्खन्धक समाप्त ॥१०॥